दीया ।लघुकथा।

आशुतोष–पिताजी जब से मेरी आंख खुली तब से ही आपको नेकी,परमार्थ,सद्भावना और समानता के लिये संघर्षरत् देखा है पर पिताजी.....

दुखहरन– पर क्या बेटा ...

आशुतोष–स्वार्थ आदमी के सिर चढकर बोल रहा हैं। सद्भावना के दर्शन तो होते नही हां जाति,सम्प्रदाय,धर्म का विषधर दौड़ा दौड़ाकर डंस रहा है। जमाने की फिक्र छोड़कर खुद की फिक्र करो पिताजी ।

दुखहरन–कोसने से बुराई खत्म नही होगी चाहे सामाजिक हो या आर्थिक या राजनैतिक । बुराई के खिलाफ तो आवाज बुलन्द करना ही होगा ।

आशुतोष–लोग उन्मादी हो गये है ।स्वार्थ,धार्मिक–जातीय वैमनस्यता, उग्रवाद और बम के धमाके ने सारी उम्मीदें तहस नहस कर दिये है।चहुंओर अंधेरा घिर चुका है ।

दुखहरन–बुराई परास्त होती ही है । आतंक का हर अंधेरा छंटेगा । अंधेरा को चीरने के लिये सद्भावना का दीया तो जलाये रखना होगा।यही सच्चे आदमी की असली पूंजी है ।

आशुतोष– सद्भावना का दीया जलाये रखने का वचन देता हूं पिताजी । नन्दलाल भारती